IMPACT FACTOR 5.397 (SJIF USA)
BIHAR SHODH SAMAAGAM
Multidisciplinary, Multi-Lingual, Peer Reviewed /Refereed Open Access Journal
Vol. 3, Issue 4, October-December, 2025
Available online : https://www.biharshodhsamaagam.com/
ISSN : 3048-6971

ग्वालियर घराने के संदर्भ में ध्रुवपद और ख़्याल में नवाचार

डॉ. अरुणा श्रीमाली
सहायक आचार्या (संगीत)
श्री पारसमल बोहरा नेत्रहीन महाविद्यालय जोधपुर

यह सर्व विदित है कि वेदों का मंत्र-गान सस्वर हुआ करता था तथा रचनायें छंदोबद्ध हुआ करती थी [1] उत्तर - वैदिक काल की समाप्ति तक जैन व बौद्ध मतों का उदय होने से अस्तित्व में आए मंदिरों में होने वाली पूजा-विधि से भी संगीत जुड़ गया तथा राज्य-प्रशस्ति परक रचनाओं के अतिरिक्त आराध्य देवताओं की प्रशस्तियाँ देश के विभिन्न भागों में प्रचलित भाषाओं में होने लगी, जिनका विस्तृत विवरण नाट्यशास्त्र के आचार्य भरत से लेकर संगीत- रत्नाकर के शारंगदेव तक अनेक लेखकों ने उदाहरण सहित प्रस्तुत किया है [2]

शारंगदेव जब संगीत-रत्नाकर की रचना कर रहे थे, तब उत्तरी भारत के अधिकांश हिस्सों में मुस्लिम सत्ता स्थिर हो गई थी तथा उसे शासकों के भारत आने से पूर्व ही उनके धर्माचार्य ने अलग-अलग स्थान पर निवास करते हुए वहां की भाषायें सीखी और कुछ फारसी तथा कुछ देशी भाषाओं के सहयोग से धर्मोपदेश परक सूफी रचनाओं का निर्माण होने लगा। इसके अंतर्गत कुछ रागों के स्वरूप बदले, कुछ नए राग आए, कुछ पुराने प्रबंध में परिवर्तन हुए उदग्राह और ध्रुव का स्थान स्थाई और अंतरे ने ले लिया, मेलापक संचारी बने। पुराने प्रबंधों के आधार पर चार खंड वाले स्थाई, अंतरा, संचारी व आभोग से युक्त ध्रुवपदों की रचनाएं होने लगी। मथुरा व वृंदावन क्षेत्र में वल्लभ संप्रदाय का उदय हुआ। अष्टछाप कवियों के पद विभिन्न प्रकार से गाने जाने लगे। श्री कृष्ण जी की होली के साथ धमार गाई जाने लगी। ख़्याल का तो प्रादुर्भाव हो ही चुका था इस कारण मोहम्मद शाह पिया सभी जगह 'सदा' रंगीली हुए।

ध्रुवपद :-

राजा मानसिंह (1487-1516) द्वारा प्रचलित ध्रुवपद एवं उनकी गान विद्या 16 वीं शती तक आते-आते एक लब्ध प्रतिष्ठ गान शैली बन गई और इसका श्रेय राजा मानसिंह तोमर के अलावा उनके दरबारी गायको जैसे बैजू बख्शू इत्यादि को दिया गया। तोमर के बाद राजा अकबर के शासनकाल में (ई. सं.1556-1605) स्वामी हरिदास,तानसेन, बाबा रामदास जैसे दिग्गज गायक रचनाकारों ने अनेक ध्रुवपदों की रचना की तथा ध्रुवपद को जनमानस में विशेष रूप से प्रसिद्ध बनाया [3] यदि भारतीय संगीत के प्राचीन इतिहास पर दृष्टि डालें तो यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि ध्रुवपद-शैली के बीज भारतीय संगीत की प्रबंध शैली व मुख्य रूप से सालगसूड प्रबंधों में विद्यमान है [4] ध्रुवपद में प्रत्येक रस से संबंद्ध काव्य हो सकता था। पुरुष एवं स्त्रियां दोनों ही इसका गान करते थे तथा इसके गान के समय तदुकुल नृत्य भी होता था [5]

ध्रुवपद एक मर्दाना व जोरदार गायकी है। कंठ को दबाना एवं स्वरों को नज़ाकत से लगाना इस गायन शैली में पूर्णतया वर्जित है। इसमें दुगुन,तिगुन, चौगुन बोलतान, गमक आदि प्रकार होते हैं। यह मुख्य रूप से शब्द प्रधान एवं वाद्यानुगत गीत शैली है। आलाप एवं बहलावे के द्वारा इसकी बढ़त करते हैं। ताल की संगति हेतु इसके साथ मृदंग/पखावज का प्रयोग होता है। चौताल, आड़ा-चौताल, मठ,झम्पा, शूल, ब्रह्म, लक्ष्मी तथा कभी-कभी तीवरा व रूपक जैसे तालों का भी इसमें प्रयोग किया जाता है। ध्रुवपद के गायको को कलावंत कहते थे और इन कलावंतों के उनके भिन्न-भिन्न बानी/वाणी द्वारा खंडार, नोहार, डागुर व गोबरहार ऐसे वर्ग होते थे। ध्रुवपद के गीतों में हमें देवी देवताओं की स्तुति, वीर-राजाओं के विरुद-वर्णन की झांकियां,राजाओं के राज्याभिषेक की चर्चाएं, अनेक उत्सवों, त्योहारों, नायिका के नख-शिख वर्णन, ऋतु वर्णन, नायिका-भेद इत्यादि विषयों का निर्वाह हुआ दिखाई देता है [6]

ख़्याल :-

शास्त्रीय संगीत में ख़्याल शब्द का यदि विवेचन किया जाए तो ज्ञात होता है कि यहां पर ख़्याल यानी 'लावणी' कहा गया है। इसका उदय 16 वीं शताब्दी में महाराष्ट्र में हुआ। यह लावणी तमाशा के रूप में प्रचार में थी। 18 वीं शताब्दी में 'तुकन गिरी' व 'शाह अली' ये दो महापुरुष लावणी से अत्यंत प्रभावित हुए और उन्होंने अभ्यास करके हिंदी क्षेत्र में लावणी को 'ख़्याल' कह कर प्रचार किया। इसी कारण महाराष्ट्र की लावणी हिंदी लावणी यानी ख़्याल की लावणी की जननी कही जाती है। कतिपय धार्मिक संप्रदायों/प्रदेश विशेषों में/भक्ति रचना/लोकगीत के रूप में भी लावणी प्रचलित रही

है ।

ख़्याल की उत्पत्ति और विकास के संदर्भ में आधुनिक विद्वानों ने भी अपने विचार प्रस्तुत किए हैं, जिनके आधार पर निम्नलिखित तथ्य प्रस्तुत किए जा सकते हैं :-

1) ख़्याल शैली के प्रवर्तक अमीर खुसरो है ।
2) ध्रुपद शैली का स्वाभाविक विकास ख़्याल में हुआ ।
3) ख़्याल के विकास में कव्वाली गायकों का योगदान रहा ।
4) ख़्याल गान विधा का आविष्कार एवं प्रचार-प्रसार सुल्तान हुसैन शर्की ने किया ।
5) रूपक, रूपकलाप्ति तथा प्राचीन गद्य-प्रबंधों से ख़्याल का विकास हुआ, ऐसी मान्यता है ।इसमें प्राचीन साधारणी गीति के तत्व दिखाई देते हैं ।[7]

निष्कर्ष :-

हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत में प्रचलित ध्रुवपद एवं ख़्याल प्रबंधों में से प्रायः दोनों ही प्रकार के प्रबंधों की रचना पंडित शंकर पंडित जी की शिष्य-परंपरा के प्रतिनिधियों ने की है ।इन रचनाकारों में स्वयं शंकर पंडित जी, पंडित कृष्ण राव शंकर पंडित, वी. जे. रिंगे, पंडित बालासाहेब पूंछवाले, पंडित लक्ष्मण भट्ट तैलंग, डॉ. शरद चंद्र आरोलकर, पंडित सदाशिव राव अमृत फले, पंडित यशवंत क्षीरसागर आदि के नाम उल्लेखनीय हैं ।शास्त्रीय संगीत की रचनाओं की प्रस्तुति में रचनाओं के अर्थ अथवा साहित्यिक बोध के बारे में प्रायः यह देखा गया है कि कम शिक्षित कलाकार हालांकि इस और उदासीन रहते हैं, परंतु विगत 25-30 वर्षों में गायको में एक ऐसे वर्ग का भी उदय हुआ है जो अपनी प्रस्तुति को स्वर व ताल से ही नहीं अपितु शब्द और अर्थ से भी सौंदर्य पूर्ण बनाने के लिए उत्सुक रहता है ।

सन्दर्भ सूची :-

1. तैत्तरीय ब्राह्मण (द्वितीय भाग) जीयर एजुकेशनलम् ट्रस्ट, वेद विश्वविद्यालय विद्वभि शोधयित्वा श्री रामानुज वाणीना प्रकाशितम्, सीतानगरम् - 522 501 गुंटूर जिला- आंध्र प्रदेश, पृष्ठ संख्या 420-421, 1/3/2, 3/9/14
2. भारतीय संगीत का इतिहास- डॉ. डी. बी. क्षीरसागर प्रथम 6 माही रिपोर्ट - 1.4.04 से 30.6.04 भारतीय इतिहास अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली पृष्ठ संख्या - 3
3. भारतीय संगीत में निबद्ध तथा अनिबद्ध गान प्रबंध शैली का विकास- विजया चांदोरकर, हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय प्र सं. 1993 पृष्ठ संख्या - 61
4. वही, पृष्ठ संख्या - 64
5. संगीत चिंतामणि- आचार्य बृहस्पति संगीत कार्यालय हाथरस (उ. प्र.) तृतीय संस्करण जून 1989 पृष्ठ संख्या 78
6. संगीत-बोध - श्री शरद चंद परांजपे (मध्य प्रदेश) हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, द्वि सं. 1980, पृष्ठ संख्या 111
7. भारतीय संगीत में निबद्ध तथा अनिबद्ध गान प्रबंध शैली का विकास- विजया चांदोरकर, हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय प्र. सं. 1993, पृष्ठ संख्या - 80